PART III
VARIATION ISSUES IN HINDI TEACHING

Rama Kant Agnihotri

Multilinguality and Language Teaching

रमा कान्त अग्निहोत्री

बहुभाषिता एवं भाषा शिक्षण

Abstract In this paper I argue that it is essential to be sensitive to language for language teaching. It is important to address such questions as: What is the nature of language? What is its structure like? How does it change? These are some of the questions about which there must be a minimal understanding. The question of language acquisition by children is also associated with these questions. This does not, however, mean that every teacher must also be a linguist. It only means that any person who claims to intervene in education must know something about language; what kind of education or knowledge can we have without language? The real nature of language is "multilinguality" and not a "homogeneous language"; diversity rather than uniformity is the defining feature of language. One more thing: issues of language teaching must be addressed. But what is special about Hindi language teaching? What is so special about English language teaching? English Language Teaching (ELT) is a big industry. It seems in the absence of the British Empire we have to have the empire of English. Our response to this socio-political pressure is not to start manufacturing as it were another brand of soap or oil. The response should be to locate the teaching of languages in the context of multilinguality.

Keywords multilinguality, language teaching, nature of language, phonology, morphology, syntax.

सारांश इस लेख में मेरा यह प्रयास है कि हम यह बात समझ सकें कि भाषा शिक्षण के लिए भाषा के प्रति सामान्य रूप से संवेदनशील होना आवश्यक है। भाषा की क्या प्रकृति है, भाषा की संरचना कैसी होती है, भाषा किस तरह बदलती है आदि कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनके बारे में कुछ समझ होनी ज़रूरी है। इन प्रश्नों से यह प्रश्न जुड़ा है कि बच्चे भाषा सीखते कैसे हैं। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि हर भाषा शिक्षक को भाषा वैज्ञानिक बनना होगा। केवल इतना ही कि वह हर व्यक्ति जिसका शिक्षा से कुछ भी लेना देना है उसे भाषा के बारे में कुछ समझ होनी चाहिए; भाषा के बिना भला कैसी शिक्षा और कैसा ज्ञान। भाषा की वास्तविक प्रकृति बहुभाषिता है न कि एकरूपता; विविधिता

Published in: Tatiana Oranskaia, Anvita Abbi (eds.): *The Heart of Change. Issues on Variation in Hindi.* Heidelberg: HASP, 2022.
DOI: https://doi.org/10.11588/hasp.919.c12625

है न कि समांगता। एक अन्य बात : भाषा शिक्षण तो समझ में आता है पर यह हिंदी भाषा शिक्षण अलग से क्या? बहुत जोर रहा है अंग्रेज़ी भाषा शिक्षण का; आज भी है। बहुत विशाल उद्योग है। अंग्रेज़ी साम्राज्य नहीं तो अंग्रेज़ी भाषा का साम्राज्य ही सही। इसका उत्तर यह नहीं कि हम एक और साबुन या तेल की तरह एक नया उद्योग शरू कर दें। इसका उत्तर यह है कि बहुभाषिता के संदर्भ में भाषा शिक्षण को समझें।

मुख्य शब्द – बहुभाषिता, भाषा शिक्षण, भाषा प्रकृति, ध्वनि संरचना, शब्द संरचना, वाक्य संरचना।

१ भाषा

भाषा को एक उचित परिभाषा देना अपने आप में एक विशेष समस्या है। आम लोग, भाषा वैज्ञानिक एवं दार्शनिक भाषा को समझने का सदियों से प्रयास कर रहे हैं। आम लोग भाषा को केवल एक संप्रेषण का माध्यम भर समझते हैं। कई भाषा वैज्ञानिक भाषा को वाक्यगत संरचना एवं एक शब्दकोष का नियमबद्ध मिलन मानते हैं। अनेक दार्शनिकों को तो लगा कि दर्शन को समझना अंततः भाषा को ही समझना है। असल में भाषा की वास्तविक प्रकृति बहुभाषिता है और बहुभाषिता इंसान होने की पहचान है (Agnihotri 2009)। चाहे वह भाषा हिंदी हो या फिर कोई अन्य भाषा, भाषा शिक्षण निरर्थक ही सिद्ध होगा जब तक हम भाषा की सही प्रकृति एवं संरचना को नहीं समझ लेते। इसलिए यह कोई हैरानी की बात नहीं कि सालों भाषा शिक्षण होने के बाद भी १२ वर्ष की शिक्षा के बाद भी विद्यार्थी न तो भाषा में ही कोई दक्षता हासिल कर पाते हैं और न ही उनकी बौद्धिक क्षमता का कोई विशेष विकास हो पाता है। भाषा शिक्षण की कक्षा में बहुभाषिता एक बहुत समृद्ध स्रोत होता है। बहुभाषिता का सरलता से भाषा शिक्षण एवं बौद्धिक विकास के लिए उपयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया से भाषा के प्रति संवेदना भी बढ़ेगी और विद्यार्थी कक्षा में एक दूसरे की भाषा की इज्ज़त करना भी सीखेंगे। हिंदी (या किसी भी और भाषा) की किसी भी कक्षा में कई अन्य भाषाएँ मौजूद रहती हैं। लेकिन उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता, चाहे वह उत्तरी भारत की हो या दक्षिणी या फिर कोई विदेशी भाषा हो। केवल 'शुद्ध भाषा' पर जोर रहता है। भाषा और बहुभाषिता में क्या रिश्ता है और कैसे एक सार्वभौमिक व्याकरण भाषाओं के आपसी संवाद में सहयोग देता है इस बात पर गौर नहीं किया जाता। जब तक भाषा पर संवाद शिक्षण-प्रशिक्षण का एक आवश्यक अंग नहीं बन जाता, तब तक भाषा शिक्षण में कोई मूल बदलाव संभव नहीं।

इसमें कोई दो राय नहीं कि एक स्तर पर भाषा एक नियमबद्ध व्यवस्था है जिसके सिद्धांत ध्वनि के, शब्दों के, वाक्य के या फिर संवाद के – यानी हर स्तर पर – कार्य करते हैं। सार्वभौमिक स्तर के ये सिद्धांत आम तौर पर कई या अनेक भाषाओं के लिए सामान्य होते हैं। उदाहरण के लिए ध्वनि के स्तर पर कुछ साधारण सिद्धांत देखें। हिंदी को ही लें। हिंदी में 'ङ' की ध्वनि शब्द के शुरू में नहीं आती। वास्तव में यह बात कई भारतीय भाषाओं के बारे में भी सच है।

यही बात अंग्रेज़ी के बारे में भी सच है। आप अंग्रेजी में किङ (king), सिङ (sing) आदि तो कह सकते हैं लेकिन *ङकि या *ङसि नहीं। इसी तरह आप हिंदी में 'लड़का' तो कह सकते हैं पर /ड़/ ध्वनि का शब्द के शुरू में प्रयोग नहीं कर सकते। *ड़काल जैसा कोई शब्द हिंदी में संभव नहीं। संसार की अधिकतर भाषाओं की शब्दावली में ध्वनि के स्तर पर व्यंजन व स्वर ध्वनि का क्रम रहता है (Hyman 2008: 101)। यानी (व्यंजन)-स्वर-(व्यंजन) आदि। इस संरचना का अर्थ यह हुआ कि स्वर के बिना शब्द नहीं बन सकता; व्यंजन के बिना बन सकता है। /आ/ हिंदी की ध्वनि है। लेकिन यह हिंदी का एक शब्द भी है और वाक्य भी। 'आ' का अर्थ है केवल 'तू आ'।

बहुत ही कम शब्द ऐसे होगें जिनमें दो या दो से अधिक व्यंजन साथ-साथ सुनाई दे रहे हों। कुछ शब्दों में ऐसे व्यंजन समूह वर्तनी के कारण दिखाई दे रहे हैं, जैसे school, cycle, psychology आदि। Psychology में आपको शुरू में पाँच व्यंजन दिख रहे हैं लिपि के आधार पर। लेकिन आप ध्यान से बोलें तो केवल एक ही व्यंजन ध्वनि है /स्/। हिंदी हो चाहे अंग्रेज़ी, शब्द के आरम्भ में केवल तीन ही व्यंजन ध्वनियाँ संभव हैं। हिंदी में शायद 'स्त्री' जिसमें /स्/, /त्/, /र/ साथ-साथ आते हैं। इसी प्रकार अंग्रेज़ी के निम्न शब्दों को देखिये:

spray, street, screw, splash, squash.

इन शब्दों के शरू में तीन व्यंजन ध्वनियाँ अवश्य हैं। लेकिन क्या व्यंजन ध्वनियों को साथ-साथ बोलने में हमें कोई कीमत अदा करनी पड़ी? बहुत अधिक। यदि हम (व्यंजन)-स्वर-(व्यंजन)-स्वर की सामान्य संरचना के आधार पर चलते हैं तो हमें कोई रोक टोक नहीं होती। हम 'काला', 'खाला', 'नाला', 'पाला', 'बाला' आदि जैसे लाखों शब्द बना सकते हैं। लेकिन आप यदि यह चाहते हैं कि हिंदी या अंग्रेज़ी शब्द के आरंभ में कई व्यंजन हों तो आप के ऊपर कई बंधन हैं। कई नियमों का पालन करना पडेगा। जैसे:

१. तीन से अधिक व्यंजन ध्वनियाँ शब्द के आरम्भ में नहीं आ सकतीं।

२. यदि तीन हैं तो पहला केवल /स्/ हो सकता है।

३. दूसरा केवल /प्/, /त्/, /ट्/, /क्/ ही हो सकता है।

४. और तीसरा व्यंजन केवल /य्/, /र्/, /ल्/, /व्/ ही हो सकता है।

यह बात कई भारतीय भाषाओं के लिए भी सच है (Pandey 2014)। यही कारण है कि अधिकतर भाषाएँ सीखते समय यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है कि भारतीय बच्चे या बड़े संयुक्त व्यंजनों को पहले या फिर बीच में स्वर लगाकर तोड़ देते हैं। उदाहरण के लिए: 'स्ट्रीट' (sṭreet) को इस्-ट्रीट (is-ṭreet) या सट्-रीट (saṭ-reet)।

बोलना एक स्वाभाविक बात है। समय के चलते सब बच्चे और बड़े सीख जाते हैं यदि उचित मात्रा में सही प्रयोग से सामना होता रहे तो। एक शिक्षक के लिए चाहे वह हिंदी पढ़ा रहा हो या अंग्रेजी ऐसी बातों की समझ होना ज़रुरी है। मोटी बात यह कि यदि आपको यह समझ नहीं कि भाषा सीखने में मुख्य मुकाम कौन कौन से होते हैं तो आप कैसे एक अच्छे भाषा शिक्षक बन सकते हैं। और यह समझना भी उतना ही ज़रूरी है कि अंग्रेजी या हिंदी के कई ऐसे रूप होंगे जहां इन नियमों का पालन इस प्रकार से नहीं होगा। उदाहरण के लिए हिंदी बोलनेवाले कई लोग 'स्त्री' को /सतरी/ या /इस्-त्री/ बोलते हैं। राजस्थान के कई हिंदीभाषियों के लिए 'चाय' का रूप /साय/ है।

शब्दों के स्तर पर देखिये। यह एक मौलिक बात है कि भाषा की संरचना जैसी ध्वनि व वाक्य के स्तर पर होती है वैसी शब्द के स्तर पर नहीं। ध्वनि व वाक्य के नियम हर जगह लागू होते हैं। ध्वनि के क्षेत्र में हमने अभी ऊपर देखा। वाक्य संरचना में हम अभी नीचे देखेंगे। ध्वनि व वाक्य के नियम हम एक बार सीख लेते हैं। बस वह काफी होता है जीवन भर भाषा का उपयोग करने के लिए। लेकिन नए शब्द, मुहावरे, उपमाएँ आदि सीखने की कोई सीमा नहीं। भाषा के इस पहलू पर

स्कूल के शिक्षक विशेष ध्यान दे सकते हैं। लेकिन इसके लिए शब्द संरचना की कुछ समझ होनी ज़रुरी है। वह इसलिए भी कि सदियों से चले आ रहे पूर्वाग्रहों को हटाना भी ज़रुरी है। उदाहरण के लिए हिंदी और अंग्रेज़ी में लिंग व्यवस्था को लीजिये। दोनों में नर और मादा होते हैं। अंग्रेजी में मादा होने की परिस्तिथि में 'she' सर्वनाम का उपयोग होता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि अंग्रेजी में भी व्याकरण के स्तर पर हिंदी की तरह कोई लिंग व्यवस्था है। व्याकरण की दृष्टि से हिंदी लिंग-युक्त है और अंग्रेजी लिंग-रहित। लेकिन अंग्रेजी और हिंदी में लिंग व्यवस्था स्कूलों में एक ही तरह से पढ़ाई जाती है। हिंदी व अंग्रेज़ी पढ़ानेवाले अध्यापक अक्सर विद्यार्थियों को हिंदी व अंग्रेज़ी की लिंग व्यवस्था सिखाते हैं बिना इस बात पर ध्यान दिए कि अंग्रेज़ी के वाक्यों को लिंग के बदलने से कोई फर्क नहीं पड़ता। हिंदी व अंग्रेजी के निम्न वाक्य देखिये:

(१) *राम सेब खा**ता** है*।

(२) *गीता सेब खा**ती** है*।

क्रिया में कर्त्ता के लिंग के अनुसार बदलाव आता है। लेकिंन अंग्रेजी में ऐसा नहीं है:

(३) *Ram **eats** an apple.*

(४) *Geeta **eats** an apple.*

वाक्य (३) और (४) में क्रिया में कोई अंतर नहीं आया; क्रिया को कोई फर्क नहीं पड़ता चाहे राम खाए, चाहे गीता। इन वाक्यों से वाक्य संरचना आधारित नियमों की पहचान भी होती है। हिंदी में शब्द-क्रम मुख्यतः 'कर्ता-कर्म-क्रिया' होगा और अंग्रेज़ी में 'कर्ता-क्रिया-कर्म'। यह भी देखें कि केवल कर्ता के वर्तमान काल में अन्य पुरुष एकवचन होने पर ही क्रिया के साथ '-स्' का प्रयोग होगा अन्यत्र कहीं नहीं। इससे स्कूलों में अंग्रेजी पढ़ाने वाले शिक्षकों को यह भी साफ़ हो जाना चाहिए कि बच्चे अंग्रेजी सीखते वक्त क्यों स्वाभाविक रूप से बोलते व लिखते हैं:

(४क) * *Geeta **eat** an apple.*

शब्दों को लेकर हिंदी में अक्सर यह पढ़ाया जाता है कि नर होगा तो पुल्लिंग और मादा होगी तो स्त्रीलिंग। सही भी है लेकिन कुछ हद तक ही। 'घोड़ा' पुल्लिंग है तो 'घोड़ी' स्त्रीलिंग। पर 'कोयल' सदा स्त्रीलिंग और 'चीता' सदा पुल्लिंग! समूहवाचक संज्ञाओं में देखें: 'भीड़' चाहे आदमियों की हो या औरतों की, सदा स्त्रीलिंग ही होगी। दूसरी तरफ 'झुण्ड' चाहे आदमियों का हो या औरतों का, पुल्लिंग ही होगा। बच्चों को यह भी पढ़ाया जाता है कि व्यंजनांत ('घर', 'बालक', 'संदूक' आदि) एवं आकारांत ('कमरा', 'गाना', 'कपड़ा' आदि) शब्द पुल्लिंग होते हैं। पर 'किताब', 'बात', 'चमक' और 'माला', 'हवा' आदि तो स्त्रीलिंग हैं। शब्दों की दुनिया ध्वनि व वाक्यों की दुनिया से बहुत अलग होती है। शब्दों की दुनिया में एक ही व्याकरणिक रिश्ते को दिखाने के अक्सर कई तरीके होते हैं (Singh & Agnihotri 1997; 2007)। हमने ऊपर देखा कि संरचना के आधार पर यह कहना संभव नहीं कि शब्द पुल्लिंग होगा या कि स्त्रीलिंग। वास्तव में शब्दों की दुनिया में एक ही व्याकरणिक रिश्ते को कई तरीकों से दिखाया जा सकता है। 'लेख' में केवल '-अक' लगाकर 'लेखक' बनता है लेकिन 'शिक्षा' में पहले '-आ' तो हटाना पड़ता है उसके बाद '-अक' लगता है

जैसे 'शिक्षक'। कुछ शब्दों में यह काम '-कार' लगाने से होगा यथा 'कला' से 'कलाकार'। यदि शिक्षक इन बातों के प्रति संवेदनशील नहीं होगा तो वह हिंदी या अंग्रेजी या फिर किसी भी भाषा का एक प्रेरणादायक शिक्षक कैसे बनेगा?

२ बहुभाषिता

भाषा को बहुभाषिता समझ कर ही हम उसे सही ढंग से परिभाषित कर सकते हैं (Agnihotri 2006, 2007a, 2007b, 2009, 2012)। यह सत्य है कि भाषा की एक सार्वभौमिक जन्मजात छवि हम सबके मानस में रहती है। वह न हो तो हम इस बात का कोई उत्तर नहीं दे सकते कि बच्चे कैसे चार वर्ष की आयु में ही भाषा की दृष्टि से व्यस्क हो जाते हैं। वे सहजभाव से किसी भी भाषा की, जो उनके पर्यावरण का हिस्सा हो, जटिल व विषम ध्वनि व वाक्य संरचना को आत्मसात कर लेते हैं। कभी कोई बच्चा अपनी मातृभाषाओं में पाँच छह साल की उम्र के बाद कोई त्रुटि नहीं करता। भाषा को एकरूपता के ढाँचे में ढालना एक भाषावैज्ञानिक, राजनैतिक या साहित्यिक मजबूरी हो सकती है पर इन सबसे भाषा कि वास्तविक बहुभाषिता छुपती नहीं। केवल शब्दों का ही नहीं बल्कि ध्वनियों व वाक्य संरचनाओं का भी लेन देन चलता रहता है उन सब के बीच जिन्हें हम 'एकरूप भाषा' का नाम देते हैं। उस 'एकरूप भाषा' का अपना वास्तविक स्वरूप बहुभाषिता है। काफी साल पहले जब मैंने बहुभाषिता (Achmat 1992; Agnihotri 1992) की बात की और उसे multilinguality कहना शुरू किया तो उसके बाद कई भाषा वैज्ञानिकों व भाषा शिक्षकों ने कई ऐसी परिकल्पनाएं व शब्द इस्तेमाल करने शुरू किये जिससे इसी बात का आभास होता है: super-diversity, translanguaging, polylingualism, hyperlingualism, interlanguaging.

भाषा को बहुभाषिता (multilinguality) कहने से हमारे क्या तात्पर्य हैं और उस परिप्रेक्ष्य में भाषा/ हिंदी भाषा शिक्षण से हम क्या समझते हैं? पहली बात तो यह कि एक ही व्यक्ति के मानस व व्यवहार में कई भाषाएँ साथ-साथ रहती हैं, उस व्यक्ति की उनमें प्रवीणता के आयाम अलग-अलग हो सकते हैं और उनमें निरंतर एक 'तरलता' का संबंध बना रहता है। यह नहीं है कि बहुत सी भाषाएँ हैं तो बहुभाषिता है। यह कि बहुभाषिता है उसके सिवा और कुछ नहीं। अभिव्यक्ति के सम्पूर्ण साधनों को मिलाकर बहुभाषिता बनती है व्यक्तिगत व सामाजिक स्तर पर। जितने समृद्ध किसी व्यक्ति के भाषागत संसाधन होगें उतनी ही समृद्ध उसकी संज्ञानात्मक क्षमता होगी और उतनी ही गहरी होगी उसकी अन्य भाषाओं व भाषा बोलनेवालों के प्रति संवेदनशीलता। हर समाज बहुभाषी होता है और इसलिए हर कक्ष भी बहुभाषी होती है। इस तरह की बहुभाषी कक्षाओं में किस तरह के अध्यापक होने चाहिये, किस तरह की पाठ्य सामग्री का प्रयोग होना चाहिए और किस तरह की शैक्षणिक प्रक्रिया व गतिविधियाँ होनी चाहिए इस पर विचार करना आवश्यक है।

३ भाषा शिक्षण

यदि हम भाषा शिक्षण में कुछ भी सार्थक नवाचार करना चाहते हैं तो इस प्रक्रिया में पहला कदम होगा शिक्षक प्रशिक्षण। इसकी शुरूआत एक छोटे स्तर से करनी होगी। बाद में इसका विस्तार हो सकता है यदि हमारे परिणाम अच्छे होगें। यानी कुछ भाषाओं में प्रवीणता, कक्षा में उपलब्ध सभी भाषाओं में रूचि, संज्ञानात्मक विकास व सामाजिक सहिष्णुता- यह सब संभव होने चाहिए। शिक्षक

प्रशिक्षण का मुख्य हिस्सा होगा भाषा के चार पक्ष: भाषा सीखने की प्रक्रिया, भाषा की संरचना, भाषा में ऐतिहासिक व सामजिक स्तर पर बदलाव और भाषा के सामाजिक व मानसिक पहलू। भाषा शिक्षक के प्रशिक्षण में अधिकतर जोर दिया जाता है पाठ्य सामग्री व शैक्षणिक प्रक्रिया पर। वास्तविकता यह है कि न तो पढ़ाने का कोई एक आदर्श तरीका हो सकता है और न ही कोई ऐसी पाठ्य सामग्री होती है जिसे आदर्श मान लिया जाए। इसके विपरीत हम यह जानते हैं कि जिन अध्यापकों को भाषा के उपरोक्त पहलूओं का आभास होता है और जो स्वयं भाषा में प्रवीण होते हैं वे स्वयं उचित सामग्री व पढ़ाने के उचित तरीके खोज लेते हैं।

३.१ भाषा शिक्षण के तरीके

भाषा किन तरीकों से पढ़ाई जाए इसका इतिहास काफी लंबा व जटिल है। इन तरीकों का अपने समय में प्रचलित भाषावैज्ञानिक व मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों व कार्यप्रणालियों से गहरा संबंध रहा है। एक सबसे पुराना तरीका जो आज भी हम पर काफी हावी है वह है मुखर रूप से व्याकरण पढ़ाना व मातृभाषा व सीखी जा रही दूसरी भाषा में निरंतर अनुवाद करते रहना। यह माना जाता था कि यदि विद्यार्थी अपनी भाषा से टारगेट भाषा में व टारगेट भाषा से अपनी भाषा में अनुवाद कर लें तो मान लेना चाहिए कि उसे टारगेट भाषा आ गई। इस मंजिल तक पहुँचने के लिए व्याकरण में संज्ञा व क्रिया के जटिल रूपों को कंठस्थ करना आवश्यक माना जाता था। यह तरीका आज भी काफी प्रचलित है। इसमें यह चिंता नहीं रहती कि शायद बच्चे को टारगेट भाषा में कुछ भी बोलना न आए। और न यह कि वह शायद कभी भी अपने विचारों को नई भाषा में व्यक्त न कर पाए। Lado (1957) से लेकर Kumaravadivelu (2006) तक भाषा शिक्षण के तरीकों में कई उतार-चढ़ाव आये। संरचनात्मक भाषावैज्ञानिक (Bloomfield 1933) व व्यवहारवादी मनोविज्ञान के दिनों में तो अनुकरण व अभ्यास का खूब बोल-बाला रहा (Skinner 1957; Thorndike 1931)। भाषा शिक्षण मुख्यतः इस बात पर आधारित था कि विद्यार्थियों को एक शब्दावली दे दी जाए और उन्हें वाक्य संरचना के सांचे सिखा दिए जाएँ जिनमें वे शब्दों को भरते जाएं। इस बात की कोई समझ नहीं थी कि बच्चे चार वर्ष की आयु से पूर्व ही भाषा की दृष्टि से व्यस्क हो जाते हैं (Chomsky 1957; 1959; 1965)। मेग्नेटिक टेप के आने से भाषा शिक्षण के तरीकों में कई बदलाव हुए। इसके साथ ही दोनों विश्व युद्धों में जासूसी करने के लिए बहुत ही कम समय में ही दुश्मन की भाषा सीखने की ज़रूरत सामने आई। टेप रिकॉर्डर व उसका विकसित रूप लैंग्विज लैब सामने आये। अब यह संभव था कि एक ही संरचना को आसानी से बार बार सुना जा सकता था और सीखनेवाले अपनी इच्छा व समय के अनुसार बिना अध्यापक के भी अभ्यास कर सकते थे और अपनी अशुद्धियों को समझ कर ठीक कर सकते थे। इस ऑडियो-लिंगुअल तरीके के मुख्य आधार थे:

— भाषा सही मायने में बोलना व सुनकर समझना है।
— भाषा एक आदत है। अभ्यास से यह स्वतः एक आदत सी बन जाती है।
— भाषा पढ़ाओ न कि भाषा के बारे में। यानी व्याकरण अलग विषय के रूप में पढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं।
— भाषा वही है जो उसके मातृभाषी बोलते हैं। न कि कोई ऐसा रूप जो आदर्श माना जाता हो।

ऑडियो-लिंगुअल तरीका अनुवाद व व्याकरण-आधारित तरीके के विरोध में एक आवाज़ भी था। सैद्धांतिक भाषा विज्ञान में फिर एक आवाज उठी डेल हायम्ज़ (Hymes 1966; 1974) की। उनका

कहना था कि भाषा केवल संरचना की ही बात नहीं; उसमें संदर्भ व समाज का भी एक आधारभूत पक्ष है। हम जो भी कहते हैं वह इस बात पर निर्भर करता है कि हम किसके साथ, कहाँ और किस विषय पर बात कर रहे हैं। इस संप्रेषण आधारित (Brumfit & Johnson 1978) भाषा शिक्षण के तरीके ने पहले इस्तेमाल हो रहे सभी तरीकों पर प्रश्न चिह्न लगा दिया। यह समझ आने लगा कि केवल व्याकरण युक्त सही भाषा बोलना ही काफी नहीं। क्या सामाजिक संदर्भ है और आप भाषा के साथ क्या करना चाहते हैं यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है। आप केवल कोई सूचना देना चाहते हैं या आज्ञा देना चाहते हैं या फिर किसी से कोई प्रार्थना करना चाहते हैं; किसी को खुश करना चाहते हैं या उससे दूरी दिखाना चाहते हैं – इन सभी परिस्थितियों में भाषा का स्वरूप बदलेगा। हिंदी का वाक्य देखें या साथ ही उसका अंग्रेज़ी अनुवाद –

दरवाज़ा खुला है। 'The door is open.'

इन वाक्यों के शब्दिक अर्थ के बिलकुल इतर संदर्भ के आधार पर एक ही वाक्य के अलग अलग मायने हो सकते हैं।

१. (दरवाज़े पर कोई दस्तक दे रहा है; अर्थ होगा): आप अंदर आ जाएँ।

२. (इंटरव्यू में नाराज़ अधिकारी यदि उम्मीदवार से कहे तो): आप बाहर जा सकते हैं ।

३. (बहुत सर्दी हो और कोई भी बिस्तर से न निकलना चाहे तो): तुम (कोई भी बिस्तर में लेटा दूसरा व्यक्ति) दरवाज़ा बंद कर दो।

संप्रेषण-आधारित भाषा शिक्षण में अधिक ज़ोर ख़ासकर शुरू के दिनों में धाराप्रवाह बोलने पर था न कि शुद्धता पर। जब संरचनात्मक भाषाविज्ञान व व्यव्हारवादिता (Bloomfield 1933; Skinner 1957) का बोलबाला था तो यह माना जाता था कि विद्यार्थी की अपनी भाषा उनके अन्य भाषा सीखने में बाधा बनेगी। स्कूल में बच्चों को नई भाषा सीखने में क्या परेशानियां आयेंगी यह समझने के लिए भाषा वैज्ञानिक व अध्यापक घर की भाषा व टारगेट भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं।

पर आधुनिक शोध में यह जल्दी ही साफ़ हो गया कि ध्वनि के स्तर को छोड़ कर टारगेट भाषा सीखनेवाले की मातृभाषा किसी भी स्तर पर बाधक नहीं होती है। और ध्वनि के स्तर पर तो मातृभाषाओं में भी खूब विविधता होती है। वास्तव में दुले, बर्ट व क्राशन (Dulay, Burt & Krashen 1982) ने साफ़ दिखा दिया कि किसी भी भाषा को अर्जन करने की राह एक ही है चाहे उसे पहली भाषा के रूप में सीखो या दूसरी। क्राशन (Krashen 1987) का कहना था कि दूसरी भाषा सीखने के लिए उपयुक्त मात्रा में समझ में आने वाला चुनौतीपूर्ण इनपुट होना चाहिए। हम सब में भाषा सीखने की क्षमता रहती है और एक ऐसा 'मॉनिटर' भी रहता है जो समय समय पर खुद भाषा को सुधारता रहता है, चाहे वह कोई भी भाषा हो, पहली, दूसरी या फिर तीसरी। कुमारवादिवेलु (Kumaravadivelu 2006) तो 'पोस्ट-मेथड' की बात करते हैं—यह एक ऐसा मुकाम है जहाँ पढ़ाने का कोई भी एक सही तरीका नहीं है। हर अध्यापक अपना अलग तरीका तलाश करता है यह समझते हुए कि उसके विद्यार्थी अलग अलग सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों से आते हैं, उनकी पहचान अलग-अलग है और जिन सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक परिस्तिथितियों में वे विद्यार्थी पढ़ा रहे हैं वे अलग हैं। वही तरीका सफल होगा जिसमें अध्यापक अपनी परिस्थिति की

विशिष्टता को पहचानेगा, यह समझेगा कि उसे अपनी परिस्तिथि से ही अपने सिद्धांत बनाने हैं और यह भी समझना है कि उसके संदर्भ में क्या संभावनाएँ हैं।

३.२ बहुभाषिता एवं भाषा शिक्षण

भाषा शिक्षण की कोई भी विधि प्रचलित रही हो किसी ने यह सवाल कभी नहीं पूछा कि उन भाषाओं का क्या होगा जो बच्चे अपने साथ लेकर स्कूल आते हैं। क्या यह मानना उचित होगा कि सभी बच्चे एक ही भाषा बोलते हैं जबकि हम जानते हैं कि कक्षाएँ सामान्यत: बहुभाषी होती हैं? क्या यह सोचना आवश्यक नहीं कि बच्चों की भाषाएँ नई भाषाएँ सीखने के लिए एक स्रोत हो सकती हैं? यही नहीं ये भाषाएँ बच्चों के संज्ञानात्मक विकास का एक समर्थ साधन बन सकती हैं। अंग्रेज़ी पढ़ाने के संदर्भ में इस तरह की सोच केन हेल व ओनील और उनके कुछ साथियों ने एम् आइ टी में शुरू की। होंडा, ओनील व पिपिन (Honda, O'Neil & Pipin 2007) ने दिखाया कि किस प्रकार भाषाविज्ञान का उपयोग अंग्रेज़ी की कक्षा में हो सकता है। बहुभाषिता के संदर्भ में यह प्रयोग १९९२ के आस पास केप टाउन में हुई कुछ कौन्फ्रेंसिज़ व कार्यशालाओं में हुआ जिन पर अद्धारित कुछ वीडियो (Achmat 1992) भी बने और कई लेख भी लिखे गए (Agnihotri 1992; 1995; 1997) । बहुभाषिता के संदर्भ में भाषा शिक्षण—हिंदी भी को लेकर—पर काफी काम हुआ (Agnihotri 2006; 2007a; 2007b; 2009; 2010; 2012; Garcia 2009; Heugh 2010; Canagarajah 2011 आदि)। सैद्धांतिक तौर पर इस दृष्टिकोण की मुख्य बातें हैं:

— यह बिलकुल ज़रुरी नहीं है कि हम सदा एक भाषा व एक पाठ्यपुस्तक के जाल में रहकर ही शिक्षा व भाषा शिक्षण के बारे में सोचें। बहुभाषिता के संदर्भ में अनेक तरह की सामग्री का प्रयोग हो सकता है। उदाहरणत: जो कहानी व गीत बच्चे अपने साथ लाते हैं वह सभी शिक्षा की सामग्री बन सकते हैं।
— हर बच्चा एक समृद्ध व जटिल भाषा लेकर कक्षा में आता है। उसकी भाषा का किसी भी कीमत पर निरादर नहीं होना चाहिए।
— हमारा प्रयास होना चाहिए कि हर बच्चे की भाषा कक्षा में हो रही गतिविधियों का हिस्सा बने। जो कहानी, गीत, मुहावरे वह साथ लेकर आता है वह उसकी विरासत का हिस्सा हैं। उनका निरादर होगा तो बच्चों का मन शिक्षा में नहीं लगेगा।
— इस तरह के तरीके के लिए यह कदापि आवश्यक नहीं कि अध्यापक को बच्चों की हर भाषा आती हो। हाँ यह ज़रूर हो सकता है कि शिक्षक बच्चों के द्वारा लाई हुई सामग्री से खुद बराबर सीखता रहे। इस तरह की सामग्री लाने के लिए बच्चों को निरंतर प्रेरित करना चाहिए, वे घर से ला सकते हैं या गली कूचों से। पोस्टरों से या इश्तिहारों से।
— बहुभाषी शिक्षण के तरीके अपनाने का यह अर्थ नहीं है कि बच्चे दो या तीन भाषाओं में प्रवीण नहीं होगें। इन भाषाओं में प्रवीणता के साथ-साथ उनका परिचय उन भाषाओं से भी होगा जो कक्षा में उपलब्ध होंगी और वे समझ पायेंगे कि हर बच्चे की भाषा राजनैतिक व सामाजिक स्तर पर न सही पर संरचनात्मक स्तर पर बराबर है।
— बच्चों की भाषाओं का इस्तेमाल करते हुए यह सहज ही संभव हो सकता है कि निम्न उद्देश्यों की पूर्ति हो: हर बच्चे की भाषा को आवाज़ मिले और उसका आत्मविश्वास बढ़े; व्याकरण के किसी एक बिंदु को लेकर (यथा लिंग, वचन आदि), विभिन्न भाषाओं से डेटा एकत्रित किया जाए और उसका नियमबद्ध तरीके से वर्गीकरण हो। समूहों में बैठकर बच्चे इनका विश्लेषण करेंगे तथा

नियम बनायेंगे। इन नियमों को फिर से नए डेटा के साथ जाँचेंगे। उदाहरण के लिए शिक्षक किसी भी एक भाषा को लेकर बोर्ड पर कुछ शब्द लिख देगा। बच्चों के साथ मिलकर उनके बहुवचन भी लिखेगा। बस इसके बाद सब काम विद्यार्थी खुद कर सकते हैं। उन्हीं शब्दों को लेकर ३ या ४ भाषाओं से एकवचन व बहुवचन लिखे जायेंगे। यह काम विद्यार्थी खुद करेंगे। इसके बाद छोटे छोटे समूहों में बैठकर वे उस डेटा का निरीक्षण करेंगे, उसे अपने अवलोकनों के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत करेंगे और बहुवचन बनाने के नियम बनायेंगे हर भाषा में। यहाँ सवाल सही या गलत का उतना नहीं है जितना कि एक संज्ञानात्मक वैज्ञानिक प्रक्रिया का।

इस तरह की गतिविधियों से यह सुनिश्चित होगा कि बच्चों की भाषा के प्रति संवेदनशीलता बढ़ेगी और उनका संज्ञानात्मक विकास होगा।

३.३ कक्षा में: शिक्षण विधि का उदाहरण

कबीर का एक दोहा है। यह अक्सर स्कूलों में पढ़ाया जाता है। हम तीसरी कक्षा से लेकर दसवीं कक्षा तक कहीं भी इसका प्रयोग कर सकते हैं। हर स्तर पर ज़ाहिर है कि गतिविधियाँ अलग अलग होंगी।

कबीरा खड़ा बज़ार में, माँगे सबकी खैर,
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर।

इस एक छोटे से दोहे से हम क्या क्या नहीं कर सकते। अच्छा रहे यदि बच्चे इसे याद कर लें और रोमन में भी लिख लें और इसके अर्थ समझ लें। जैसे:

kabiiraa khaRaa bazaar men, maange sab kii khair,
naa kaahuu se dostii, naa kaahuu se bair .

(Roman letters have their normal phonetic value. Vowel length is marked by doubling, such as /aa/, /ii/ etc., /n/ after vowels is used to mark nasalization.)

'कबीरा' को ही लें। रोमन में लिखें या देवनागरी में कोई फर्क नहीं पड़ता। मुद्दा यह है कि संरचना व्यंजन-स्वर क्रम की है। एक साधारण सी गतिविधि से शरू कर सकते हैं। यह गतिविधि तीसरी या चौथी कक्षा में हो सकती है। हर बच्चा अपना नाम लिख सकता है देवनागरी में भी व रोमन में भी। भारत के सरकारी स्कूलों में भी यह दोनों लिपियाँ पहली-दूसरी कक्षा से ही अक्सर शुरू हो जाती हैं। कुछ नाम हो सकते हैं: विराट / Viraat, सुरेश / Suresh, कविता / Kavitaa, होमना / Homnaa, सविता / Savitaa आदि। यह समझने में अधिक समय नहीं लगेगा कि इन सभी शब्दों में व्यंजन-स्वर-व्यंजन का क्रम रहता है। रोमन में लिखने से यह बात अधिक साफ़ हो जाती है। आप पूरे दोहे को देखें यही क्रम है केवल 'दोस्ती' को छोड़कर। उसमें भी आप 'स्' के बाद रुकते हैं। भाषा के बारे में इस प्रकार की चेतना से बहुत लाभ होता है। सभी बच्चे समझने लगते हैं कि विभिन्न भाषाओं में शब्दों की संरचना अधिकतर एक तरह की ही होती है। थोड़े से प्रयास से यह संभव है कि कक्षा में विद्यार्थी अपने आस पास की दुनिया के शब्दों पर एक नज़र डालें। जैसे: 'कोका कोला', 'पानी', 'दूध', 'चाय', 'चीनी', 'कलम' आदि।

यदि कोई भारतीयभाषी दो या दो से अधिक व्यंजन एक साथ बोलने का प्रयास करें तो कई बंधन होते हैं और वह कोई स्वाभाविक प्रक्रिया भी नहीं लगती। अक्सर बच्चे व अन्य भाषाएँ सीखनेवाले लोग व्यंजनों को तोड़कर ही बोलते हैं यथा *स्कूल* को *इसकूल* या फिर *सकूल*। जैसा कि हमने ऊपर देखा तीन से अधिक व्यंजनों को बोलने पर तो भारतीय भाषाओं और अंग्रेज़ी में बहुत ही सख्त अंकुश है।

इस तरह की सब बातें बच्चे स्वयं तलाश कर लेते हैं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा अध्यापक की भाषा विज्ञान के कुछ आधारभूत पहलूओं पर पकड़ होना ज़रुरी है। अक्सर यह प्रशन उठाया जाता है कि बहुभाषी कक्षा में इस तरह की गतिविधियाँ करते हुए अध्यापक किस भाषा का प्रयोग करे। इस तरह की आशंकाओं के पीछे यही मानसिकता छुपी रहती है कि किसी भी कक्षा में शिक्षण का ढांचा 'एक किताब-एक भाषा-एक अध्यापक' का होना चाहिए। इससे दूर हटना आवश्यक है। तभी अध्यापक व विद्यार्थियों की सृजनशीलता को जगह मिलेगी। हमें सोचना चाहिए कि अलग-अलग भाषा बोलने वाले विद्यार्थी जो कक्षा में चुप-चाप बैठे रहते हैं वही खेल के मैदान में एक दूसरे से खूब बातें करते हैं और कई बार तो वह सब भी एक दूसरे को समझाते हैं जो कक्षा में अध्यापक ने पढ़ाया। यह तो साफ़ है कि कक्षा में अध्यापक उन्हीं भाषाओं का प्रयोग कर सकता है जो उसे आती हैं। सवाल इस बात का है कि वह विद्यार्थियों की भाषाओं को कितनी जगह देता है।

शब्दों के स्तर पर देखिये। बच्चों के साथ संज्ञा पर बातचीत शुरू करें। कुछ ही देर में बच्चे यह शब्द दोहे में से निकाल लेगें: 'बज़ार', 'दोस्ती', 'खैर', 'बैर'। बस अब अध्यापक का काम ख़त्म। इसके बाद जब ज़रूरत होगी तो अध्यापक मदद करेगा अन्यथा वह विद्यार्थियों को समूहों में काम करते हुए देखेगा। छोटे छोटे समूहों में बैठकर बच्चे इन शब्दों के लिए अपनी अपनी भाषा के शब्द लिखें। रोमन लिपि में भी व देवनागरी में भी। इनके लिए अंग्रेजी के शब्द भी बताये जा सकते हैं। कक्षा पर निर्भर करता है। इसके बाद इन शब्दों के बहुवचन बनाएँ। 'बज़ार', 'खैर' व 'बैर' का तो कुछ न होगा पर 'दोस्ती' का 'दोस्तियाँ'। लेकिन कुछ ही देर में यह साफ़ होगा कि 'बाज़ारों' तो होता है। आप कक्षा में इस तरह की गतिविधि करें और देखें क्या समाँ बंधता है। बच्चे अपने आस पास के शब्दों को लिखकर उनके बहुवचन बनाते हैं और हिंदीभाषी बच्चे हिंदी में बहुवचन बनाने के जटिल नियम खुद तलाश कर लेते हैं। अन्य समूह अन्य भाषाओं में ऐसे ही नियम तलाश करेंगे। बात नियम तलाश करने की ही नहीं। जैसा कि मैंने पहले कहा बात है उस प्रक्रिया से गुज़रने की जो वैज्ञानिक है और जो केवल भाषा के माध्यम से ही संभव है खासकर ७–८ साल की छोटी उम्र में। इस उम्र में आप भौतिक या रसायन शास्त्र का प्रयोग अभी नहीं कर सकते वैज्ञानिक प्रक्रिया से परिचित कराने के लिए। बच्चे स्वयं इस बात को समझ लेते हैं कि हिंदी में शब्द का बहुवचन बनाने के लिए यह जानना आवश्यक है कि शब्द की अंतिम ध्वनि क्या है और उसका लिंग क्या है। 'मकान' और 'घर' व्यंजनांत हैं पर पुल्लिंग भी। साधारण बहुवचन में इनमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। 'बड़ा मकान'/ 'बड़े मकान' आदि। लेकिन 'किताब' और 'पुस्तक' भी व्यंजनांत हैं लेकिन स्त्रीलिंग। इनका बहुवचन बिलकुल अलग 'किताबें', 'पुस्तकें'। परसर्ग (यानी 'में', 'ने' आदि) आने से पहले सभी बहुवचन बदलेंगे अलग अलग नियमों से परंतु परसर्ग के साथ एक ही सामान्य नियम के अनुसार: *मकानों / घरों / किताबों / पुस्तकों में*—इसी प्रकार बच्चे अपनी अपनी भाषा के नियम बना सकते हैं। यदि यह गतिविधि प्राइमरी कक्षाओं में हो रही है तो 'विशेषण' या 'परसर्ग' जैसे तकनीकी शब्द इस्तेमाल करने की आवश्यकता नहीं।

अंग्रेजी में लिंग नहीं है। बहुवचन बनाने के लिए शब्दांत ध्वनि को ही सुनना है ध्यान से। उदाहरण के लिए बच्चे जल्द ही यह नियम पकड़ लेते हैं कि यदि शब्द का अंत /स्/, /श्/, /च्/ या /ज्/ से हो तो बहुवचन बनाने के लिए अंग्रेज़ी में 'इज़' लगाना होता है यथा 'बसिज़', 'बुशिज़' आदि।

प्रश्न नियम सीखने का नहीं है। प्रश्न है वैज्ञानिक प्रक्रिया से गुजरने का; भाषा के प्रति संवेदनशीलता का; संज्ञानात्मक विकास का व सामाजिक सहिष्णुता का। प्रश्न भाषा में प्रवीणता का भी है। फिर से कबीर के दोहे को देखें। इसे हिंदी कहें, अवधि या ब्रज या उस समय में आम लोगों में बोली जाने वाली हिन्दुस्तानी। (यह सवाल हर भाषा के बारे में पूछा जाना चाहिए।) किसी बड़ी कक्षा में इस बात पर भी खूब चर्चा हो सकती है। इतिहास, राजनीति व भाषा के संघर्ष का यह एक बहुत ही जटिल मुकाम है। तीसरी-चौथी कक्षा के बच्चे भी बहुत कुछ कर सकते हैं। बहुभाषिता के संदर्भ में भाषागत प्रवीणता के लिए बहुत जगह रहती है। अनुवाद करना व अलग अलग भाषाओं में सरलार्थ व टिप्पणी करना कुछ सक्शत तरीके बहुभाषिता का उपयोग करने के हैं। सवाल आरंभ में शुद्धता का नहीं। सवाल है बेझिझक बोलने व लिखने का; समझकर पढ़ने का। मान लो कक्षा में हिंदी व अंग्रेज़ी के साथ साथ मेवाड़ी, भीली, मंडियाली व गुजराती भी हैं। कक्षा में खुलकर बोलने, अपनी भाषाओं का प्रयोग करने में व भाषा के नियम खोजने की प्रक्रिया में कोई अंतर्विरोध नहीं। बात है विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का एवं उनके संज्ञानात्मक विकास का। विद्यार्थी छोटे छोटे समूहों में बैठकर इस दोहे को गद्य में लिखते हैं। अलग भाषाओं में अनुवाद कर सकते हैं। जैसे:

कबीरा बाज़ार में खड़ा है, वह सबकी खैर मांगता है
उसकी न किसीसे दोस्ती है और न ही किसी से बैर।

मानिये अंग्रेजी में कुछ ऐसा अनुवाद हो:

‘Kabira stands in the market place and prays for the
welfare of one and all.
He is neither anybody’s friend nor anybody’s foe.’

हो सकता है कक्षा में कोई विद्यार्थी हिमाचल के मंडी शहर का हो। वह लिख सकता है:

कबीर खड़ी रा बजारा, सब री माँगया कराँ खैर
न केसी कन्ने तेसरी दोस्ती न केसी कन्ने बैर।

यदि कोई विद्यार्थी मेवाड़ी जानता होगा तो कुछ ऐसा:

कबीरा उबो बजार वचे, मांगे सबरी खैर,
ना कणी सु यारी, ना कणी सु वेर

हम ने ऊपर देखा कि हिंदी व अन्य भारतीय भाषाएँ (खासी को छोड़ दें) क्रियांत हैं। हिंदी के वाक्य (१) (*राम सेब खाता है*) व (२) *(गीता सेब खाती है*) में चार-चार शब्द हैं। यानी इनसे शब्दों को इधर उधर कर अधिक से अधिक चार! जो कि ४x३x२x१=२४ वाक्य बन सकते हैं। हिंदी में लचीलापन है इसलिए कुछ इस तरह के वाक्य संभव हैं:

(१क) *सेब राम खाता है।*
(२क) *खाता है राम सेब।*

पर अंग्रेज़ी में ऐसा लचीलापन संभव नहीं। क्रिया मध्य में है, यथा (३) Ram eats an apple। यहाँ भी चार शब्द हैं और २४ वाक्य बनना संभव है पर वाक्य (३) के अलावा एक भी व्याकरणिक तौर पर मान्य नहीं होगा और अर्थ के स्तर पर भी यह अटपटा:

(३क) **An apple eats Ram.*

इन सब बातों को लेकर १३–१४ साल के विद्यार्थी खूब चर्चा कर सकते हैं। इन अनुवादों से साफ़ होगा कि हिंदी में काफी लचीलापन है। क्रिया को हम कुछ इधर उधर कर सकते हैं। अंग्रेज़ी में यह संभव नहीं। और भी कई आयामों पर चर्चा संभव है। हिंदी में 'में' 'बज़ार' के बाद आता है और अंग्रेजी में पहले। इस तरह के कई अंतर सामने आयेंगे। यह सब कक्षा ८–९ तक आते-आते हो सकता है।

साहित्य, भाषा व भाषा विश्लेषण की प्रक्रिया को हम जितना साथ साथ रखेंगे उतना ही लाभ होगा।

४ निष्कर्ष

कबीर के दोहों को देखें या प्राचीन भारत की मणिप्रवाल प्रथा को या फिर आम आदमी की भाषा को देखें, हमें चारों ओर भाषा का रूप बहुभाषिता जैसा ही दिखाई देता है। इसी बहुभाषिता को सामने रखते हुए ही हमें भाषा शिक्षण के बारे में सोच विचार करना चाहिए। हर विद्यार्थी भाषागत क्षमता व कुछ भाषाएँ लेकर ही कक्षा में आता है। बहुत से विद्यार्थी, बहुत सी भाषागत विविधिता। हर बच्चे की आवाज़ को जगह मिलनी चाहिए। इसी तरीके से ऐसा भाषा शिक्षण संभव होगा जिसकी मानवता को ज़रूरत है।

ORCID®
Rama Kant Agnihotri https://orcid.org/0000-0003-0878-0913

संदर्भ-सूची

Achmat, Z. 1992. "Yo dude, cosa wena kyk a? *The Multilingual Classroom*", Salt River, South Africa: National Language Project. (<http://www.youtube.com/watch?v=l74ULxuBM3EAgniho>, accessed: April 14, 2014).

Agnihotri, Rama Kant 1991. "India: Multilingual Perspectives". Paper presented at the International Conference on Democratic Approaches to Language Planning and Standardization. National Language Project and University of Cape Town, Cape Town, September 11–13, 1991.

Agnihotri, Rama Kant 1992. "India: Multilingual Perspectives", in: Crawhall, N. T. (ed.): *Democratically Speaking: International Perspectives on Language Planning*. Salt River, South Africa: National Language Project, 46–55.
Agnihotri, Rama Kant 1995. "Multilingualism as a Classroom Resource", in: Heugh, K., A. Siegrühn & P. Plüddemann (eds): *Multilingual Education for South Africa*. Johannesburg: Heinemann, 3–7.
Agnihotri, Rama Kant 1997. "Multilingualism, colonialism and translation", in: Ramakrishna, S. (ed.): *Translation and Multilingualism: Post-colonial Contexts*. Delhi: Pencraft International, 34–46.
Agnihotri, Rama Kant 2006. "Identity and Multilinguality: The Case of India", in: Tsui, A. B. M. & J. W. Tollefson (eds): *Language Policy, Culture, and Identity in Asian Contexts*. Mahwah, NJ: Lawrence Erlbaum Associates, Inc., 185–204.
Agnihotri, Rama Kant 2007a. "Towards a Pedagogical Paradigm Rooted in Multilinguality", *International Multilingual Research Journal* 1: 79–88.
Agnihotri, Rama Kant 2007b. *Hindi: An Essential Grammar*. London: Routledge.
Agnihotri, Rama Kant 2009. "Multilinguality and a New World Order", in: Mohanty, A. K., M. Panda, R. Phillipson & T. Skutnabb-Kangas (eds): *Multilingual Education for Social Justice: Globalizing the Local*. New Delhi: Orient BlackSwan, 268–277.
Agnihotri, Rama Kant 2010. "Multilinguality and the Teaching of English in India", *The EFL Journal* 1: 1–14.
Agnihotri, Rama Kant 2012. "Multilinguality, Marginality and Social Change", in: Khanna, A.L & A. S. Gupta (eds): *Essential Readings for Teachers of English: From Research Insights to Classroom Practices*. New Delhi: Orient BlackSwan, 13–24.
Bloomfield, Leonard 1933. *Language*. London: George Allen and Unwin.
Brumfit, C. J. & K. Johnson 1978. *The Communicative Approach to Language Teaching*. Oxford: Oxford University Press.
Canagarajah, A. S. (2011). "Codemeshing in Academic Writing: Identifying Teachable Strategies of the Translanguaging", *Modern Language Journal* 95: 401–417.
Chomsky, Noam 1957. *Syntactic Structures*. The Hague: Mouton.
Chomsky, Noam 1959. "Review of BF Skinner's Verbal Behaviour", *Language* 35: 26–58.
Chomsky, Noam 1965. *Aspects of Theory of Syntax*. Cambridge, Mass: MIT Press.
Dulay, H., M. Burt & S. Krashen 1982. *Language Two*. New York: Oxford University Press.
Garcia, O. 2009. "Education, Multilingualism and Translanguaging in the 21st Century", in: Mohanty, A. K., M. Panda, R. Phillipson & T. Skutnabb-Kangas

(eds): *Multilingual Education for Social Justice: Globalizing the Local*. New Delhi: Orient BlackSwan, 128–145.
Hymes, D. (ed.) 1966. *Language in Culture and Society*. New York: Harper and Row.
Hymes, D. 1974. *Foundations in Sociolinguistics: An Ethnographic Approach*. Philadelphia: University of Pennsylvania Press.
Heugh, K. 2010. "Productive Engagement with Linguistic Diversity in Tension with Globalised Discourses in Ethiopia", *Current Issues in Language Planning* 11, 378–396.
Honda, Maya, Wayne O'Neil, and David Pippin 2007. "On Promoting Linguistics Literacy: Bringing Language Science to the English Classroom", in: Denham, Kristin and Anne Lobeck (eds): *Linguistics at School: Language Awareness in Primary and Secondary Education*. Cambridge: Cambridge University Press, 175–188.
Hyman, Larry M. 2008. "Universals in Phonology", *The Review* 25(1–2): 83–137. (<https://doi.org/10.1515/TLIR.2008.003>, accessed: March 25, 2019).
Krashen, S. 1987 [1982]. *Principles and Practice in Second Language Acquisition*. New York (et al.): Prentice Hall International.
Kumaravadivelu, B. 2006. *Understanding Language Teaching: From Method to Post-Method*. Marwah, N.J.: Lawrence Erlbaum.
Lado, R. 1957. *Linguistics Across Cultures*. Ann Arbor: University of Michigan Press.
Pandey, Pramod 2014. *Sounds and Their Patterns in Indic Languages*. Vol. 1. *Sound Patterns*. New Delhi: Cambridge University Press.
Singh, Rajendra & Rama Kant Agnihotri 1997. *Hindi Morphology: A Word-based Description*. Delhi: Motilal Banarsidass.
Skinner, B.F. 1957. *Verbal Behaviour*. New York: Appleton Century Crofts.
Thorndike, Edward Lee 1931. *Human Learning*. New York: The Century.